International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 05-07-2026, Accepted: 05-08-2026, Published: 20-08-2026
Volume 12, Issue 3, 2026, Page No. 108-110

माता अमृता देवी बिश्नोईः नारी शक्ति, त्याग और प्रकृति प्रेम

किरण
हिन्दी विभाग, ओम स्टर्लिंग ग्लोबल यूनिवर्सिटी, हिसार, हरियाणा, भारत

सारांश
भारतीय संस्कृति में प्रकृति को कभी भी मात्र एक भौतिक संसाधन नहीं माना गया, बल्कि उसे जीवन, सह –अस्तित्व एवं मानवीय संवेदनाओं की आधारशिला के रूप में देखा गया है। जल, वृक्ष, वन्यजीव तथा संपूर्ण जैव –जगत भारतीय लोक– चेतना और भारतीय संत परंपरा में सदैव करुणा और संरक्षण का केंद्र बिंदु रहे हैं। इसी विशुद्ध प्रकृति दृष्टि के आलोक में गुरु जंभेश्वर जी द्वारा स्थापित 29 नियमों बिश्नोई समाज की पारिस्थितिकीय–संरक्षण परंपरा का विशिष्ट स्थान है। इस परंपरा का सर्वाधिक मार्मिक ऐतिहासिक मिसाल सन् 1730 का खेजड़ली बलिदान है, जहां माता अमृता देवी बिश्नोई ने खेजड़ी वृक्षों की रक्षा हेतु अपने प्राण न्योछावर कर दिए। उनके इस कदम का अनुसरण करते हुए उनकी तीन बेटियों सहित बिश्नोई समाज के 363 लोगों ने अपना आत्म बलिदान दिया। यह प्रसंग स्त्री–शक्ति, त्याग, साहस, सामूहिक एकता तथा प्रकृति के प्रति अगाध प्रेम का एक दुर्लभ दृष्टांत है। इस शोध पत्र के माध्यम से माता अमृता देवी बिश्नोई के जीवन व कार्यों के माध्यम से नारी–शक्ति, आत्म बलिदान तथा पर्यावरण–प्रेम के अंतर संबंधों का गहन विश्लेषण करना है। इसमें यह विश्लेषित किया गया है कि किस तरह अमृता देवी का त्याग महज वृक्ष एवं जीव संरक्षण की सीमा लाँघकर मनुष्य और प्रकृति के नैतिक एवं सह–अस्तित्व संबंध का प्रतीक बनता है। खेजड़ली की इस घटना के परवर्ती काल में भारत में उपजे विभिन्न पर्यावरणीय चेतना के विभिन्न चरणों को समग्रता में समझा जा सकता है – जैसेः 1973 का "चिपको आंदोलन", 1983 का "अप्पिको आंदोलन" तथा नर्मदा बचाओ आंदोलन, जैसे जन संघर्षों ने प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण को केंद्र में ला खड़ा किया। इस आंदोलन के संदर्भ में खेजड़ली की गाथा एक ठोस ऐतिहासिक नींव का निर्माण करती हैं। वर्तमान 21वीं सदी में जलवायु परिवर्तन, वनोन्मूलन, जैव–विविधता की क्षति, जल–संकट, भूमि– क्षरण जैसी गंभीर समस्या मानवता के सम्मुख चुनौती बनकर खड़ी है। इस परिप्रेक्ष्य में माता अमृता देवी का जीवन–चरित्र केवल एक ऐतिहासिक स्मृति न रहकर, आधुनिक युग के लिए, पर्यावरणीय संकट के लिए, एक जीवंत नैतिक संदेश के रूप में प्रासंगिक हो जाता है। इस दृष्टांत से यह सिद्ध होता है अमृता देवी जी का यह संघर्ष दर्शाता है – कि नारी न केवल परिवार और समाज की रक्षक है अपितु संपूर्ण सृष्टि और पर्यावरण की रक्षा में भी निर्णायक नेतृत्व क्षमता रखती है। अतः यह शोध अमृता देवी बिश्नोई के बलिदान को पर्यावरणीय चेतना के परस्पर संबंधों में विश्लेषित करता है। त्याग में निहित साहस, नारी शक्ति में निहित नेतृत्व, भाव और प्रकृति प्रेम में निहित सह –अस्तित्व की भावना वर्तमान पर्यावरणीय संकट के संबंध में आज भी सार्थक है। इस दृष्टि से खेजड़ली का बलिदान भारतीय पर्यावरण संरक्षण का वह प्रेरणादायी अध्याय है जो अतीत से वर्तमान और भावी पीढ़ियों तक प्रकृति के प्रति मानवीय उत्तरदायित्व का अविरल प्रवाह बनाए रखने में आज भी पूर्णतः प्रासंगिक है।

मूल शब्दः गुरु जंभेश्वर जी, अमृता देवी जी, पर्यावरण चेतना, खेजड़ली बलिदान, बिश्नोई समाज, प्रकृति –प्रेम, पर्यावरण– संरक्षण, प्रासंगिकता।

भारतीय जीव चिंतन परंपरा में मनुष्य और प्रकृति का अंतर–संबंध केवल उपयोगितावादी दृष्टिकोण या भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति तक सीमित नहीं रहा, बल्कि यह सह–अस्तित्व संवेदनशीलता और जीव–संवेदना के मूलभूत सिद्धांतों पर आधारित रहा है। भारतीय लोकपरंपराओं, धार्मिक विश्वासों, संत – वाड़म्य (साहित्य) में वृक्ष, नदियां, पर्वत तथा पशु – पक्षी पूजनीय एवं संरक्षणीय अंग स्वीकार किए गए हैं।

वर्तमान 21वीं सदी में जब संपूर्ण वैश्विक समुदाय जलवायु परिवर्तन, तीव्र वनोन्मूलन, जैव विविधता का ह्रास, तथा जल संकट और प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित दोहन विकराल समस्या बनकर उभर आई है। तब भारतीय संस्कृति में रची–बसी प्राकृतिक चेतना का पुनर्पाठ अधिक प्रासंगिक हो जाता है।

राजस्थान के शुष्क एवं विषम भौगोलिक परिवेश में पनपा बिश्नोई समाज मनुष्य और प्रकृति के बीच एक अनूठा मॉडल प्रस्तुत करता है। इस परंपरा की वैचारिक जड़ें 'संत गुरु जंभेश्वर' (जिन्हें जांभोजी के नाम से पुकारा जाता है) के द्वारा प्रतिपादित 29 नियमों या जाम्भोजी की वाणी में मिलती है। जिनमें जीव दया, अहिंसा, हरित वृक्षों की हिफाजत, स्वच्छता, जल–बचाव तथा संयमपूर्ण आचरण जैसे मूल्य केंद्रीय स्थान रखते हैं। इन नियमों को बाहरी न मानकर व्यक्ति के नैतिक, आध्यात्मिक और दैनिक जीवन का अनिवार्य अंग बनाया है। इस प्रकार बिश्नोई समुदाय में पारिस्थितिक संरक्षण दीर्घकाल से चली आ रही जीवन–शैली और सामूहिकता का सहज हिस्सा रहा हैं।

इसी प्रकृति निष्ठा और नैतिक प्रतिबद्धता की सर्वाधिक सशक्त ऐतिहासिक झलक, स्वर्णिम अध्याय सन् 1730 में राजस्थान के खेजड़ली गांव में उभर कर सामने आती है। यहां माता अमृता देवी बिश्नोई का जीवन एवं उनका महान बलिदान है। जोधपुर (राजस्थान) के खेजड़ली गांव में भाद्रपद शुक्ल दशमी, विक्रम संवत 1787, (सितंबर 1730 ई.) को घटी यह घटना विश्व पर्यावरण इतिहास में अभिन्न हैं।

जब जोधपुर के तत्कालीन राजा अभय सिंह के सैनिकों ने महल निर्माण में चुना पकाने हेतु खेजड़ली के हरे वृक्षों को काटने के लिए गांव में प्रवेश किया तब माता अमृता देवी जी ने निर्भीकता से उनका विरोध किया।

माता अमृता देवी ने तात्कालिक सत्ता और राजा के आदेश के सामने झुकने से इनकार करते हुए कहा–

"सिर साँटे रूँख रहे, तो भी सस्तो जाण"

(अर्थात – यदि पेड़ों और प्रकृति की रक्षा के लिए अपना सर (जान) कट जाए तो भी यह सौदा बहुत सस्ता यानी घाटे का नहीं है।)

माता अमृता देवी जी ने स्वयं राजा के फरमान का विरोध करते हुए वृक्षों को बचाने के लिए खेजड़ी के तने से लिपट गई तथा सैनिकों की तलवारों का सामना करते हुए अपने प्राणों का बलिदान दे दिया। उनके इस अदम्य साहस से उनकी तीन बेटियां– आसू, रतनी और भागू तथा बिश्नोई समाज के 363 श्रद्धालुओं (69 महिलाएं और 294 पुरुष) ने एक–एक ने पेड़ों को गले लगाकर अपने प्राण न्योछावर कर दिए।

अमृता देवी बिश्नोई की जीवन – गाथा तथा उनका आत्मोत्सर्ग मेरे लिए, मेरी दृष्टि में केवल इतिहास का एक शौर्य– प्रसंग भर नहीं है । यह इतिहास की केवल एक वीर गाथा नहीं, बल्कि यह मनुष्य और प्रकृति के मध्य अटूट बंधन का जीवंत प्रमाण प्रस्तुत करता है। जो आधुनिकता तथा औद्योगिक प्रगति की अंधी होड़ में ओझल होता जा रहा है । सन् 1730 का यह प्रसंग और भी सार्थक हो उठता है जब हम यह देखते हैं कि जिस समय 'जलवायु परिवर्तन', 'पर्यावरण संरक्षण' और 'जैव विविधता' जैसी शब्दावली का शास्त्रीय विकास नहीं हुआ था, उस समय अमृता देवी जी ने खेजड़ी वृक्षों की रक्षा के लिए, अपने प्राणों की परवाह न करते हुए, वृक्षों से लिपट कर अपने प्राण न्योछावर कर दिए । इस प्रकार उस समय में भी पर्यावरण संरक्षण की वही चेतना दिखाई देती है, जिसे आज वर्तमान समय में विश्व स्तर पर वैज्ञानिक और परिस्थितिकीय दृष्टि से अपरिहार्य माना जाता है । उस समय की खेजड़ली घटना का यदि वर्तमान समय में मिलान किया जाए तो यह स्पष्ट होता है कि अमृता देवी का निर्णय अधिक विलक्षण प्रतीत होता है 18वीं शताब्दी के प्रथम चरण में न कोई पर्यावरण कानून अस्तित्व में था, न आज जैसी पर्यावरण संरक्षण संस्थाएं, न ही सोशल मीडिया अथवा जनसंचार के आधुनिक माध्यम और न ही अपने विचारों को रखने के लिए कोई मंच था। औपचारिक मंचों के अभाव के बावजूद यदि उनके पास कुछ था, तो वह था – प्रकृति के प्रति अटूट निष्ठा, अपने संस्कारों की सुदृढ़ता और अनैतिक सत्ता आदेश के समक्ष सिर न झुकाने का अदम्य साहस।

अमृता देवी का प्रतिरोध अहिंसक था। उन्होंने किसी अस्त्र–शस्त्र का आक्षय न लेकर अपने शरीर को ही वृक्षों के सामने खड़ा कर दिया । वृक्ष और कुल्हाड़ी के बीच खड़ा यह शरीर अंततः अपने प्राणों की आहुति दे दी। मेरे लिए यह केवल एक ऐतिहासिक घटना ही नहीं, बल्कि यह प्रकृति के प्रति मानव की नैतिक कर्तव्य की सजीव अभिव्यक्ति है। उन्होंने यह संदेश दिया कि इस तरह की स्थिति आने पर प्रकृति को बचाना, भावी पीढ़ियों के जीवन को सुरक्षित करना है।

लेकिन मूल प्रश्न यह उठता है

कि 'क्या हमारे पास प्रकृति के प्रति उतनी ही तीव्र सवेंदना और अडिगता शेष है, जितना अमृता देवी में विद्यमान थी'?

वर्तमान समय में सबसे बड़ी आवश्यकता इसी आत्म – मंथन की है ।

अमृता देवी की सबसे बड़ी विशेषता यह नहीं कि उन्होंने केवल अपने प्राणों का बलिदान दिया, बल्कि यह थी कि उन्होंने अपने दृढ़ संकल्प को अंतिम क्षण तक नहीं छोड़ा। साधारण परिस्थितियों में पेड़ – पौधों, जीव –जंतु, पशु – पक्षी आदि से लगाव और प्रेम करना आसान है, लेकिन जब किसी के अपने जीवन, हित, सुविधा पर संकट आए, उस समय मनुष्य प्रकृति के साथ अपने सिद्धांतों पर कायम रहे, तभी लगाव या प्रेम की वास्तविक परीक्षा होती है। अमृता देवी बिश्नोई ने प्रकृति के प्रति लगाव और प्रेम की परीक्षा को अपने जीवन से प्रमाणित किया। यहां यह स्पष्ट होता है कि एक व्यक्ति का दृढ़ संकल्प समाज में बड़े परिवर्तन की शुरुआत कर सकता है ।

मेरे लिए अमृता जी त्याग और बलिदान की मूर्ति होने के साथ–साथ जिम्मेदारी और दृढ़ संकल्प की प्रेरणा भी है। उनका त्याग देखकर अगर हम केवल भावुक होते हैं, या उनकी कहानी पढ़कर केवल उनकी प्रशंसा करें, और दूसरी तरफ अपने आसपास हो रही बर्बादी या प्रकृति के विनाश को देखकर चुप रहे, तो उनके त्याग और बलिदान का सार्थक या वास्तविक अर्थ हम नहीं समझ पाएंगे। इसी विचार से इतिहास वर्तमान से जुड़ता है।

यहां एक मूल प्रश्न सामने आता है– 'यदि उस समय अमृता देवी ने अपने शरीर को वृक्षों की ढ़ाल बनाया था, तो आज की नारी अपने ज्ञान, अधिकार और आवाज को प्रकृति की ढ़ाल कैसे बना सकती है ?

तब शरीर प्रकृति की ढ़ाल बना था, आज चेतना, ज्ञान और आवाज को प्रकृति की ढाल बनना चाहिए ।

भारतीय इतिहास में खेजड़ी का यह प्रसंग विभिन्न पर्यावरणीय–आंदोलनों की एक अनूठी नैतिक नींव बना। बाद के दशकों में भारत में वन संरक्षण से जुड़े अनेक आंदोलन जैसे – सन् 1973 का 'चिपको आंदोलन' (उत्तराखंड) जिसमें गौरादेवी और चंडी प्रसाद भट्ट जैसे समर्थकों के नेतृत्व में महिलाओं ने पेड़ों से लिपटकर उन्हें बचाया, सन् 1983 का 'अप्पिको आंदोलन' (कर्नाटक) सीधे तौर पर खेजड़ली की इस पावन गाथा तथा अमृता देवी के विचार से प्ररित थे।

इसी संदर्भ में प्रसिद्ध पर्यावरण–विद् 'रामचंद्र गुहा' ने अपनी पुस्तक 'द अनक्वाइट वुड्स' में उत्तराखंड के हिमालयी क्षेत्र तथा वन–नीति और चिपको आंदोलन का विश्लेषण करते हैं। इसको खेजड़ली बलिदान की ऐतिहासिक आधारशिला के रूप में प्रतिष्ठित किया जा सकता है। इससे यह सिद्ध होता है कि भारतीय संस्कृति में पर्यावरण संरक्षण की चेतना सदियों पुरानी है।

इसी क्रम में 'अनुपम मिश्र' ने अपनी प्रसिद्ध रचना 'राजस्थान की रजत बूंदे' में यह प्रतिपादित करते हैं कि बिश्नोई समाज की जीवन–शैली में प्रकृति को केवल एक संसाधन ने मानकर जीवन का एक अनिवार्य अंग माना गया हैं। इसके अतिरिक्त अन्य प्रसिद्ध पर्यावरण विदों के नाम भी बड़े आदर के साथ लिए जाते हैं, जिनका मानना है कि पर्यावरण संरक्षण एक परंपरा नहीं है अपितु संपूर्ण समाज की जीवन शैली का एक अंग है, इनमें 'डॉ. पेमाराम', 'सुंदरलाल बहुगुणा' कृत 'धरती की पुकार' अंतरराष्ट्रीय स्तर पर 'वंदना शिवा' (स्टेइंग अलाइव) जैसे पर्यावरण विद् विचारकों ने अमृता देवी के इस संघर्ष को नारीवादी पर्यावरणवाद की मूल भावना के रूप में रेखांकित किया है।

वर्तमान समय में खेजड़ी संरक्षणः अमृता देवी के पर्यावरणीय आदर्शों की प्रासंगिकताः

खेजड़ी राजस्थान के जनजीवन, लोक – आस्था, ग्रामीण अर्थव्यवस्था का कल्पवृक्ष है। इसकी सार्थकता केवल पारिस्थितिक दायरे तक की सीमित नहीं, अपितु यह पशुपालन, मरुस्थलीय जीवन–शैली तथा सामुदायिक रीति–रिवाजों की रीढ़ भी है। बिश्नोई समाज की खेजड़ी के प्रति श्रद्धा मनुष्य और प्रकृ ति के बीच सह –अस्तित्व को दर्शाती है।

माता अमृता देवी बिश्नोई का प्रकृति प्रेम या प्रकृति रक्षक चेतना आज भी समकालीन जन आंदोलन की अंतर–आत्मा बनकर धड़क रही है। 'फरवरी 2026 में बीकानेर की धरा पर बिश्नोई समाज द्वारा चलाया गया–"खेजड़ी बचाओ–कानून बनाओ" एक गौरवशाली परंपरा की हुंकार था। जिसके परिणाम स्वरुप राजस्थान सरकार को खेजड़ी की कटाई–रोक पर लिखित आदेश जारी करने पड़े।

इसी प्रकार जुलाई 2025 में हिमाचल प्रदेश की खराहल घाटी (कुल्लू) "बिजली महादेव रोपवे" परियोजना के नाम पर हो रही

वृक्षों की कटाई तथा पादप–संहार के विरुद्ध स्थानीय ग्रामीणों ने सड़क पर उतरकर मोर्चा संभाला।
इसी क्रम में एक अन्य घटना, मई 2026 में हैदराबाद के ज्ञठत राष्ट्रीय उद्यान के पारिस्थितिक–संवेदनशील क्षेत्र में फ्लाईओवर के निर्माण हेतु सर्वोच्च न्यायालय ने वृक्ष कटाई पर रोक लगाई। यह शहरी क्षेत्र में हरित क्षेत्र बचाने की बढ़ती चेतना का उदाहरण है।
ये सभी समकालीन उदाहरण यह सिद्ध करते हैं कि अमृता देवी जी का निःस्वार्थ प्रकृति प्रेम, सामुदायिक सहभागिता और त्याग का विचार आज भी सबसे बड़ी प्रेरणा शक्ति बना हुआ हैं।
इससे यह सिद्ध होता है कि जब समाज अपने मूल्यों के प्रति दृढ़ संकल्पित होता है तो सत्ता को भी हर हालात में उसकी आवाज सुननी पड़ती है।

गुरु जंभेश्वर जी द्वारा प्रतिपादित 29 नियमों में पर्यावरण संरक्षणः
गुरु जंभेश्वर जी द्वारा प्रतिपादित 29 नियम केवल आचरण या धार्मिक जीवन तक सीमित नहीं, बल्कि यह पर्यावरण संरक्षण की कालजयी आधारशिला है। गुरु जंभेश्वर विश्वविद्यालय की आधिकारिक सामग्री या मान्यता के अनुसार ये नियम मानव जीवन को प्रकृति के साथ अटूट रूप से जोड़ते हैं।
इन नियमों का पर्यावरणीय अध्ययन करने पर प्रमुख विचारः
1. जीवो के प्रति दया और अहिंसा
2. हरे वृक्षों को न काटना
3. जल और प्राकृतिक संसाधनों के प्रति सावधानी
4. पशु पक्षियों की रक्षा प्रकृति के साथ संतुलित व्यवहार

यह एक नैतिक प्रश्न है–
'हम प्रकृति से क्या लेते हैं और उसके संरक्षण के लिए क्या लौटाते हैं?'

निष्कर्ष
निष्कर्ष में यह कहा जा सकता है कि अमृता देवी जी का जीवन हमें यह सिखाता है कि पर्यावरण संरक्षण केवल विशेषज्ञों या सरकारों का कार्य नहीं है। इसमें आम नागरिकों की भूमिका भी विशेष स्थान रखती है। उस समय खेजडली में कोई मीडिया नहीं थी, कोई बड़ा संगठन नहीं था, कोई राजनीतिक दल नहीं था, न कोई आधुनिक आंदोलन था, लेकिन फिर भी उस समय आम नागरिकों नें प्रकृति की रक्षा के लिए असाधारण साहस का परिचय दिया। पर्यावरण चेतना का सबसे मजबूत आधार जनभागीदारी थी।
पर्यावरण दिवस पर माता अमृता देवी बिश्नोई का स्मरण मात्र एक श्रद्धांजलि नहीं, अपितु प्रकृति के साथ सह– अस्तित्व की भारतीय संस्कृति चेतना को पुनः जीवित करने का अवसर है। 1730 का अमृता देवी बलिदान यह सिद्ध करता है कि पर्यावरण संरक्षण हमारे जीवन शैली का अभिन्न हिस्सा है। उनकी इस त्यागमय विरासत को निरंतरता प्रदान करते हुए– "अमृता देवी बिश्नोई स्मृति पुरस्कार" जिसकी शुरुआत 11 सितंबर 2001 में राजस्थान सरकार के द्वारा की गई, जो सबसे पहले जोधपुर के चिराई गांव के 'गंगाराम बिश्नोई' को मरणोपरांत दिया गया था। इस प्रकार वर्तमान समय में भी 'डॉ.गौरी शंकर शर्मा' तथा 'गोविंद भारद्वाज' को भी इस पुरस्कार से सम्मानित किया गया है!
जो इस बात का प्रमाण है कि वर्तमान समय में भी अमृता देवी का संदेश समाज को जागरूक होने की प्रेरणा दे रहा है इनका यह बलिदान सिद्ध करता है कि पृथ्वी हमारी व्यक्तिगत विरासत नहीं, बल्कि एक अमूल्य साझा धरोहर है जिसकी रक्षा करना हम सभी का परम कर्तव्य है खेजड़ली की विरासत आज भी हमें अपनी जिम्मेदारी और सतत विकास की राह दिखाती है।

संदर्भ

1. गुरु जंभेश्वर विश्वविद्यालय, हिसार– गुरु जंभेश्वर जी महाराज संबंधी आधिकारिक सामग्री।
2. आचार्य, कृ. (सम्पा.)। (2020) जम्भसागर (13 वां सं.)। जांभाणी साहित्य अकादमी, बीकानेर।
3. गैदर, ज. (2019)। खेजड़ली बलिदान (नाटक)। जांभाणी साहित्य अकादमी।
4. राजस्थान सरकार, आपणो संस्कृति – खेजड़ी, राजस्थान की सांस्कृतिक एवं पर्यावरणीय सामग्री।
5. पेमाराम। (1999)। राजस्थान में धार्मिक आंदोलन और बिश्नोई संप्रदाय । जयपुरः पंचशील प्रकाशन।
6. बहुगुणा, सुंदरलाल। (1996) । धरती की पुकार । नई दिल्लीः राधाकृष्ण प्रकाशन।
7. द टाइम्स ऑफ इंडिया, (2025, नवंबर 5) 'बिजली महादेव रोपवे', परियोजना।
8. गुहा, रामचंद्र, द अनक्वाइट वुड्सः इकोलॉजिकल चेंज एंड पीजेंट रेजिस्टेंस, ऑक्सफोर्ट यूनिवर्सिटी प्रेस, 1991।
9. द टाइम्स ऑफ इंडिया, (2026, फरवरी 7) 'खेजड़ी बचाओ– कानून बनाओ' आंदोलन ।
10. मिश्र, अनुपम, राजस्थान की रजत बूंदे, (गांधी शांति प्रतिष्ठान),नई दिल्लीः 1995
11. राजस्थान सरकार। (2020)। वार्षिक प्रतिवेदन 2019 – 2020 राजस्थान वन विभाग